।।ॐ।।

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ
प. पू. सरसंघचालक डॉ. श्री मोहन जी भागवत का
विजयादशमी उत्सव के अवसर पर दिया उद्बोधन
(आश्विन शुद्ध दशमी बुधवार दि. 5 अक्तूबर 2022)

आज के कार्यक्रम की प्रमुख अतिथि आदरणीया श्रीमती संतोष यादव जी, मंच पर उपस्थित विदर्भ प्रांत के मा. संघचालक, नागपुर महानगर के मा. संघचालक, नागपुर महानगर के मा. सह संघचालक, अन्य अधिकारी गण, नागरिक सज्जन, माता भगिनी, तथा आत्मीय स्वयंसेवक बंधु।

नौरात्रि की शक्ति पूजा के पश्चात विजय के साथ उदित होने वाली आश्विन शुक्ल दशमी के दिन हम प्रतिवर्षानुसार विजयादशमी उत्सव को संपन्न करने के लिए यहाँ एकत्रित है। शक्तिस्वरूपा जगद्जननी ही शिवसंकल्पों के सफल होने का आधार है। सर्वत्र पवित्रता व शान्ति स्थापन करने के लिए भी शक्ति का आधार अनिवार्य है। संयोग से आज प्रमुख अतिथि के रूप में अपनी गरिमामयी उपस्थिति से हमें लाभान्वित व हर्षित करने वाली श्रीमती संतोष यादव उसी शक्ति का व चैतन्य का प्रतिनिधित्व करती है। उन्होंने गौरी शंकर की ऊँचाई को दो बार पादाक्रांत किया है।

संघ के कार्यक्रमों में अतिथि के नाते समाज की प्रबुद्ध व कर्तृत्व संपन्न महिलाओं की उपस्थिति की परम्परा पुरानी है। व्यक्ति निर्माण की शाखा पद्धति पुरुष व महिला के लिए संघ तथा समिति की पृथक् चलती है। बाकी सभी कार्यों मे महिला पुरुष साथ में मिलकर ही कार्य संपन्न करते हैं। भारतीय परम्परा में इसी पूरकता की दृष्टि से विचार किया गया है। हम ने उस दृष्टि को भुला दिया, मातृशक्ति को सीमित कर दिया। सतत आक्रमणों की परिस्थिति ने इस मिथ्याचार को तात्कालिक वैधता प्रदान की तथा उसको एक आदत के रूप में ढाल दिया। भारत के नवोत्थान के उष:काल की पहली आहट से हमारे सभी महापुरुषों ने इस रूढ़ि को त्यागकर; मातृशक्ति को एकदम देवता स्वरूप मानकर पूजाघर में बंद करना अथवा द्वितीय श्रेणी की मानकर रसोईघर में मर्यादित कर देना, इन दोनों अतियों से बचते हुए उनके प्रबोधन, सशक्तिकरण तथा समाज के सभी क्रियाकलापों में, निर्णय प्रक्रिया सहित सर्वत्र बराबरी की सहभागिता पर ही जोर दिया है। तरह - तरह के अनुभवों की ठोकरें खा कर विश्व में प्रचलित व्यक्तिवादी तथा स्त्रीवादी दृष्टिकोण भी अब इस तरफ ही अपना विचार मोड़ रहा है। २०१७ में विभिन्न संगठनों में काम करने वाली महिला कार्यकर्ताओं ने मिलकर भारत की महिलाओं का बहुत व्यापक व सर्वांगीण सर्वेक्षण किया। वह शासन को भी पहुंचाया गया। उस सर्वेक्षण के निष्कर्षों से भी मातृशक्ति के प्रबोधन, सशक्तिकरण तथा उनकी समान सहभागिता की आवश्यकता अधोरेखित होती है। यह कार्य कुटुम्ब स्तर से प्रारम्भ होकर संगठनों तक स्वीकृत व प्रचलित होना पड़ेगा तब और तभी मातृशक्ति सहित सम्पूर्ण समाज की संहति राष्ट्रीय नवोत्थान में अपनी भूमिका का सफल निर्वाह कर सकेगी।

इस राष्ट्रीय नवोत्थान की प्रक्रिया को अब सामान्य व्यक्ति भी अनुभव कर रहा है। अपने प्रिय भारत के बल में, शील में तथा जागतिक प्रतिष्ठा में वृद्धि का निरन्तर क्रम देखकर हम सभी आनन्दित हैं। सभी क्षेत्रों में आत्मनिर्भरता की ओर ले जाने वाली नीतियों का अनुसरण का पुरस्कार शासन के द्वारा हो रहा है। विश्व के राष्ट्रों में अब भारत का महत्व तथा विश्वसनीयता बढ़ गयी है। सुरक्षा क्षेत्र में हम अधिकाधिक स्वावलंबी होते चले जा रहे हैं। कोरोना की विपदा से

निकल कर गति से सम्हल कर हमारी अर्थव्यवस्था पूर्व स्थिति प्राप्त कर रही है। आधुनिक भारत के इस आगेकूच के आर्थिक, तकनीकी तथा सांस्कृतिक बुनियादी ढाँचे का वर्णन नयी दिल्ली में कर्तव्य - पथ के उद्घाटन समारोह के समय प्रधानमंत्री जी से आपने सुना ही है। शासन के द्वारा स्पष्ट रूप से घोषित यह दिशा अभिनन्दन योग्य है। परन्तु इस दिशा में हम सब मन वचन कर्म से एक होकर चलें इस की आवश्यकता है। आत्मनिर्भरता के पथपर बढ़ने के लिए अपने राष्ट्र के आत्मस्वरूप को, शासन, प्रशासन व समाज स्पष्ट तथा समान रूप से समझता हो यह अनिवार्य पूर्वशर्त है। अपने अपने स्थान व परिस्थिति में उसके आधार पर बढ़ते समय आवश्यकता पड़ने पर कुछ लचीलापन धारण करना पड़ता है। तब आपसी समझदारी तथा विश्वास मिलकर आगेकूच को कायम रखते हैं। विचार की स्पष्टता, समान दृष्टि तथा दृढ़ता, लचीलेपन की मर्यादा का भान प्रदान कर गलतियों से व भटकाव से बचाते हैं। शासन, प्रशासन, विभिन्न प्रकार के नेतागण तथा समाज इस प्रकार स्वार्थ व भेदभावों से परे होकर सहचित्त हो कर्तव्यपथ पर बढ़ते हैं, तब राष्ट्र प्रगति की दिशा में अग्रसर होता है। शासन प्रशासन तथा नेता - गण अपने कर्तव्यों को करेंगे ही, समाज को भी अपने कर्तव्यों का विचारपूर्वक निर्वहन करना चाहिए।

इस नवोत्थान की प्रक्रिया में अभी भी बाधाओं को पार करने का काम करना पडेगा। पहली बाधा है गतानुगतिकता ! समय के साथ मनुष्यों का ज्ञाननिधि बढ़ते रहता है। समय के चलते कुछ चीज़ें बदलती है, कुछ विलुप्त हो जाती है। कुछ नयी बातें व परिस्थितियाँ जन्म भी लेती है। इसलिए नयी रचना बनाते समय हमें परम्परा व सामयिकता का समन्वय करना पड़ता है। कालबाह्य हुई बातों का त्याग कर नयी युगानुकुल व देशानुकुल परम्पराएं बनानी पड़ती है, उसी समय हमारी पहचान, संस्कृति, जीवन दृष्टि आदि को अधोरेखित करने वाले शाश्वत मूल्यों का क्षरण न हो, उनके प्रति श्रद्धा व उनका आचरण, पूर्ववत बना रहे इसकी सावधानी बरतनी पड़ती है।

दुसरे प्रकार की बाधाएं भारत की एकता व उन्नति को न चाहने वाली शक्तियां निर्माण करती है। ग़लत अथवा असत्य विमर्श को प्रसारित कर भ्रम फैलाना, आततायी कृत्य करना अथवा उसको प्रोत्साहन देना और समाज में आतंक, कलह व अराजकता को बढाते रहना यह उनकी कार्य पद्धति का अनुभव हम ले ही रहे है। समाज के विभिन्न वर्गों में स्वार्थ व द्वेष के आधार पर दूरियाँ और दुश्मनी बनाने का काम स्वतन्त्र भारत में भी उनके द्वारा चल रहा है। उनके बहकावे में न फ़सते हुए, उनकी भाषा, पंथ, प्रांत, नीति कोई भी हो, उनके प्रति निर्मोही हो कर निर्भयतापूर्वक उनका निषेध व प्रतिकार करना चाहिए। शासन व प्रशासन के इन शक्तियों के नियंत्रण व निर्मूलन के प्रयासों में हमको सहाय्यक बनना चाहिए। समाज का सबल व सफल सहयोग ही देश की सुरक्षा व एकात्मता को पूर्णत: निश्चित कर सकता है।

समाज की सशक्त भूमिका के बिना कोई भला काम अथवा कोई परिवर्तन यशस्वी व स्थायी नहीं हो सकता यह सर्वत्र अनुभव है। अच्छी व्यवस्था भी लोगों का मन बनाएं बिना अथवा लोगों ने मन से स्वीकार नहीं की तो चल नहीं पाती।

विश्व में आये अथवा लाये गये सभी बड़े व स्थायी परिवर्तनों में समाज की जागृति के बाद ही व्यवस्थाओं तथा तंत्र में परिवर्तन आया है। मातृभाषा में शिक्षा को बढ़ावा देने वाली नीति बननी चाहिए यह अत्यंत उचित विचार है, और नयी शिक्षा नीति के तहत उस ओर शासन/ प्रशासन पर्याप्त ध्यान भी दे रहा है। परन्तु अपने पाल्यों को मातृभाषा में पढ़ाना अभिभावक चाहते हैं क्या? अथवा तथाकथित आर्थिक लाभ अथवा Career (जिसके लिए शिक्षा से भी अधिक आवश्यकता उद्यम, साहस व सूझबूझ की होती है) की मृग मरीचिका के पीछे चली अंधी दौड़ में अपने पाल्योंको दौडाना चाहते हैं ? मातृभाषा की प्रतिष्ठा की अपेक्षा शासन से करते समय हमें यह भी देखना होगा कि हम हमारे हस्ताक्षर

मातृभाषा में करते हैं या नहीं ? हमारे घर पर नामफलक मातृभाषा में लगा है कि नहीं ? घर के कार्यप्रसंगों के निमंत्रण पत्र मातृभाषा में भेजे जाते हैं या नहीं ?

नयी शिक्षा नीति के कारण छात्र एक अच्छा मनुष्य बने, उसमें देशभक्ति की भावना जगे, वह सुसंस्कृत नागरिक बने यह सभी चाहते हैं। परन्तु क्या सुशिक्षित, संपन्न व प्रबुद्ध अभिभावक भी शिक्षा के इस समग्र उद्देश्य को ध्यान में रख कर अपने पाल्यों को विद्यालय महाविद्यालयों में भेजते हैं ? फिर शिक्षा केवल कक्षाओं में नहीं होती। घर में संस्कारों का वातावरण रखने में अभिभावकों की; समाज में भद्रता, सामाजिक अनुशासन इत्यादि का वातारण ठीक रखने वाले माध्यमों की, जननेताओं की तथा पर्व, त्यौहार, उत्सव, मेले आदि सामाजिक आयोजनों की भूमिका का भी बराबरी का महत्व होता है। उस पक्ष पर हमारा ध्यान कितना है ? बिना उसके केवल विद्यालयीन शिक्षा कदापि प्रभावी नहीं हो सकती है।

विविध प्रकार की चिकित्सा पद्धतियाँ समन्वित कर स्वास्थ्य की सस्ती, उत्तम गुणवत्ता की, सर्वत्र सुलभ तथा व्यापारिक मानसिकता से मुक्त व्यवस्था देने वाला स्वास्थ्य तंत्र शासन के द्वारा खड़ा हो यह संघ का भी प्रस्ताव है। शासन की प्रेरणा व समर्थन से भी व्यक्तिगत व सामाजिक स्वच्छता के, योग तथा व्यायाम के उपक्रम चलते हैं। समाज में भी ऐसा आग्रह रखनेवाले, इन बातों का महत्व बतानेवाले बहुत हैं। लेकिन इन सबकी उपेक्षा कर समाज अपने पुराने ढर्रे पर ही चलते रहा तो कौनसी ऐसी व्यवस्था है जो सबके स्वास्थ्य को ठीक रख सकेगी ?

संविधान के कारण राजनीतिक तथा आर्थिक समता का पथ प्रशस्त हो गया, परन्तु सामाजिक समता को लाये बिना वास्तविक व टिकाऊ परिवर्तन नही आयेगा ऐसी चेतावनी पूज्य डॉ. बाबासाहब आंबेडकर जी ने हम सबको दी थी। बाद में कथित रूप से इसी उद्देश्य को ध्यान में रखकर कई नियम आदि बने। परन्तु विषमता का मूल तो मन में ही तथा आचरण की आदत में है। व्यक्तिगत तथा कौटुंबिक स्तर पर आपस में मित्रता के, सहज अनौपचारिक आनेजाने, उठने बैठने के संबंध बनते नहीं; तथा सामाजिक स्तर पर मंदिर, पानी, शमशान सब हिन्दुओं के लिए खुले नहीं होते, तब तक समता की बातें केवल स्वप्नों की बातें रह जायेंगी।

जो परिवर्तन तंत्र के द्वारा लाया जाए ऐसी हमारी अपेक्षा है वह बातें हमारे आचरण में होने से परिवर्तन की प्रक्रिया को गति व बल मिलता है, वह स्थायी हो जाता है। ऐसा न होने से परिवर्तन प्रक्रिया अवरुद्ध हो सकती है और परिवर्तन स्थायित्व की ओर नहीं बढ़ता। परिवर्तन के लिए समाज की विशिष्ट मानसिकता को बनाना अनिवार्य पूर्वशर्त है। अपनी विचार परम्परा पर आधारित उपभोगवाद व शोषण से रहित विकास को साधने के लिए समाज से तथा स्वयं के जीवन से भोग वृत्ति व शोषक प्रवृत्ति को जड़ मूल से हटाना पडेगा।

भारत जैसे विशाल जनसंख्या वाले देश में आर्थिक तथा विकास नीति रोजगार-उन्मुख हो यह अपेक्षा स्वाभाविक ही कही जायेगी। परन्तु रोजगार याने केवल नौकरी नहीं यह समझदारी समाज में भी बढ़नी पड़ेगी। कोई काम प्रतिष्ठा में छोटा या हल्का नहीं है, परिश्रम, पूंजी तथा बौद्धिक श्रम सभी का महत्व समान है यह मान्यता व तदनुरूप आचरण हम सबका होना पड़ेगा। उद्यमिता की ओर जानेवाली प्रवृत्तियों को प्रोत्साहन देना होगा। प्रत्येक जिले में रोजगार प्रशिक्षण की विकेन्द्रित योजना बने तथा अपने जिले में ही रोजगार प्राप्त हो सकें, गाँवों में विकास के कार्यक्रम से शिक्षा, स्वास्थ्य, यातायात आदि सुविधाएँ सुलभ हो जायें यह अपेक्षा सरकार से तो रहती ही है। परन्तु कोरोना की आपत्ति के समय कार्यरत रहने वाले कार्यकर्ताओं ने यह भी अनुभव किया है कि समाज का संगठित बल भी बहुत कुछ कर सकता है। आर्थिक क्षेत्र में काम करने वाले संगठन, लघु उद्यमी, कुछ सम्पन्न सज्जन, कलाकौशल के जानकार, प्रशिक्षक तथा

स्थानीय स्वयंसेवकों ने लगभग २७५ जिलों में स्वदेशी जागरण मंच के साथ मिलकर यह प्रयोग प्रारम्भ किया है। इस प्रारम्भिक अवस्था में ही रोज़गार सृजन में उल्लेखनीय योगदान देने में वे सफल हुए हैं ऐसी जानकारी मिल रही है।

राष्ट्रजीवन के प्रत्येक क्षेत्र में समाज के सहभाग का यह विचार व आग्रह शासन को उनके दायित्व से मुक्त करने के लिए नही, बल्कि राष्ट्र के उत्थान में समाज के सहभाग को साथ लेने की आवश्यकता तथा उसके लिए अनुकूल नीति निर्धारण की ओर इंगित करता है। अपने देश की जनसंख्या विशाल है यह एक वास्तविकता है। जनसंख्या का विचार आजकल दोनों प्रकार से होता है। इस जनसंख्या के लिए उतनी मात्रा में साधन आवश्यक होंगे, वह बढ़ती चली जाय तो भारी बोझ- कदाचित असह्य बोझ – बनेगी। इसलिए उसे नियंत्रित रखने का ही पहलू विचारणीय मानकर योजना बनाई जाती है। विचार का दूसरा प्रकार भी सामने आता है, उस में जनसंख्या को एक निधि - Asset - भी माना जाता है। उसके उचित प्रशिक्षण व अधिकतम उपयोग की बात सोची जाती है। पूरे विश्व की जनसंख्या को देखते हैं तो एक बात ध्यान में आती है। केवल अपने देश को देखते हैं तो विचार बदल भी सकता है। चीन ने अपनी जनसंख्या नियंत्रित करने की नीति बदलकर अब उसकी वृद्धि के लिए प्रोत्साहन देना प्रारंभ किया है। अपने देश का हित भी जनसंख्या के विचार को प्रभावित करता है। आज हम सबसे युवा देश हैं। आगे ५० वर्षों के पश्चात आज के तरुण प्रौढ़ बनेंगे तब उनकी सम्हाल के लिए कितने तरुण आवश्यक होंगे यह गणित हमें भी करना होगा। देश का जन अपने पुरुषार्थ से देश को वैभवशाली बनाता है, साथ ही स्वयं का व समाज का जीवन निर्वाह भी सुरक्षित करता है। जनता के योगक्षेम के तथा राष्ट्रीय पहचान व सुरक्षा के अतिरिक्त और भी कुछ पहलुओं को यह विषय छूता है।

संतान संख्या का विषय माताओं के स्वास्थ्य, आर्थिक क्षमता, शिक्षा, इच्छा से जुड़ा है। प्रत्येक परिवार की आवश्यकता से भी जुड़ा है। जनसंख्या पर्यावरण को भी प्रभावित करतीं हैं।

सारांश में जनसंख्या नीति इतनी सारी बातों का समग्र व एकात्म विचार करके बने, सभी पर समान रूप से लागू हो, लोकप्रबोधन द्वारा इस के पूर्ण पालन की मानसिकता बनानी होगी। तभी जनसंख्या नियंत्रण के नियम परिणाम ला सकेंगे।

सन 2000 में भारत सरकार ने समग्रता से विचार कर एक जनसंख्या नीति का निर्धारण किया था। उसमें एक महत्वपूर्ण लक्ष्य 2.1 के प्रजनन दर (TFR) को प्राप्त करना था। अभी 2022 में हर पाँच वर्ष में प्रकाशित NFHS की रिपोर्ट आई है। जहाँ समाज की जागरूकता और सकारात्मक सहभागिता तथा केंद्र एवं राज्य सरकारों के सतत समन्वित प्रयासों के परिणामस्वरूप 2.1 से भी कम लगभग 2.0 के प्रजनन दर पर आ गई है। जहाँ जनसंख्या नियंत्रण के प्रति जागरूकता और उस लक्ष्य की प्राप्ति की दिशा में हम निरंतर अग्रसर हैं, वहीं दो प्रश्न और भी विचार के लिए खड़े हो रहे हैं। समाज विज्ञानी और मनोवैज्ञानिकों के मत के अनुसार बहुत छोटे परिवारों के कारण बालक-बालिकाओं के स्वस्थ समग्र विकास, परिवारों में असुरक्षा का भाव, सामाजिक तनाव, एकाकी जीवन आदि अनेक चुनौतियों का भी सामना करना पड़ रहा है और हमारे समाज की संपूर्ण व्यवस्था का केंद्र " परिवार व्यवस्था " पर भी एक प्रश्नचिन्ह खड़ा हो गया है। वहीं एक दूसरा महत्व का प्रश्न जनसांख्यिकी असंतुलन का भी है। 75 वर्ष पूर्व हमने अपने देश में इस का अनुभव किया ही है और इक्कीसवीं सदी में जिन तीन नये स्वतंत्र देशों का अस्तित्व विश्व में हुआ, ईस्ट तिमोर, दक्षिणी सुडान और कोसोवा, वे इंडोनेशिया, सुडान और सर्बिया के एक भूभाग में जनसंख्या का संतुलन बिगड़ने का ही परिणाम है। जब जब किसी देश में जनसांख्यिकी असंतुलन होता है तब - तब उस देश की भौगोलिक सीमाओं में भी परिवर्तन आता है। जन्मदर में असमानता के साथ साथ लोभ, लालच, जबरदस्ती से चलने वाला मतांतरण व देश में हुई घुसपैठ भी बड़े

कारण है। इन सबका विचार करना पडेगा। जनसंख्या नियंत्रण के साथ साथ पांथिक आधार पर जनसंख्या संतुलन भी महत्व का विषय है जिसकी अनदेखी नहीं की जा सकती।

प्रजातंत्र में प्रजा के मनोयोग से सहयोग का महत्व सर्वश्रुत है ही। नियमों का बनना, स्वीकार होना तथा अपेक्षा परिणाम तक पहुँचना उसी से होता है। जिन नियमों से त्वरित लाभ होते हैं, अथवा कालांतर में कोई लाभ अथवा स्वार्थसिद्धि दिखाई देती हो उन्हें समझाना नहीं पड़ता। परन्तु जब देश के हित में या दुर्बलों के हित में अपने स्वार्थ को छोड़ना पड़े, वहाँ इस त्याग के लिए जनता सदैव तय्यार रहे इस लिए समाज में स्व का बोध व गौरव जगाए रखने की आवश्यकता होती है।

यह स्व हम सबको जोड़ता है। क्यों कि वह हमारे प्राचीन पूर्वजों ने प्राप्त किये सत्य की प्रत्यक्षानुभूति का सीधा परिणाम है। " सर्व यद्भूतं यच्च भव्यं " उसी एक शाश्वत अव्यय मूल की अभिव्यक्ति मात्र है, इसीलिए अपनी विशिष्टता पर श्रद्धापूर्वक दृढ़ रहते हुए सभी की विविधता, विशिष्टता का सम्मान व स्वीकार करना चाहिए, यह बात सबको सिखाने वाला केवल भारत है। सब एक हैं इसलिए सबको मिलजुलकर चलना चाहिए, मान्यताओं की विविधता हमको अलग नहीं करती। सत्य, करुणा, अंतर्बाह्य शुचिता, तथा तपस् का तत्वचतुष्टय सभी मान्यताओं को साथ चलाता है। सभी विविधताओं को सुरक्षित व विकासमान रखते हुए जोड़ता है। उसी को हमारे यहां धर्म कहा गया। इन्हीं चार तत्वों के आधार पर सम्पूर्ण विश्व के जीवन को समन्वय, संवाद, सौहार्द तथा शान्ति पूर्वक चला सकने वाले संस्कार देने वाली संस्कृति हम सबको जोड़ती है, विश्व को कुटुम्ब के नाते जोड़ने की प्रेरणा देती है। सृष्टि से लेकर हम सभी जीते हैं, फलते फूलते हैं। जीवने यावदादानं स्यात्प्रदानं ततोऽधिकम् की भावना हमें उसी से मिलती है। " वसुधैव कुटुंबकम् " की यह भावना तथा " विश्वं भवत्येकं नीडम् " यह भव्य लक्ष्य हमें पुरुषार्थ की प्रेरणा देता है।

हमारे राष्ट्रीय जीवन का यह सनातन प्रवाह प्राचीन समय से इसी उद्देश्य से इसी रीति से चलता आया है। समय व परिस्थिति के अनुसार रूप, पथ तथा शैली बदलती गयी परन्तु मूल विचार, गन्तव्य तथा उद्देश्य निरन्तर वही रहे हैं। इस पथ पर यह निरन्तर गति हमें अगणित वीरों के शौर्य और समर्पण से, असंख्य कर्मयोगियों के भीमपरिश्रम से तथा ज्ञानियों की दुर्धर तपस्या से प्राप्त हुई है। उनको हम सब अपने जीवन में अनुकरणीय आदर्शों का स्थान देते हैं। वे हम सबके गौरव निधान हैं। वे हमारे समान पूर्वज हमारे जुड़ने का एक और आधार हैं।

उन सभी ने हमारी पवित्र मातृभूमि भारत वर्ष के ही गुणगान किये है। प्राचीन काल से सभी प्रकार की विविधता को ससम्मान स्वीकार कर साथ चलाने का हमारा स्वभाव बना; भौतिक सुख की परमावधि पर ही न रुकते हुए अपने अन्तरतम की गहराइयों को खंगालकर हमने अस्तित्व के सत्य को प्राप्त किया; विश्व को अपना ही परिवार मानकर सर्वत्र ज्ञान, विज्ञान, संस्कृति व भद्रता का प्रसार किया इसका कारण यह हमारी मातृभूमि भारत ही है। प्राचीन काल में सुजल सुफल मलयजशीतल इस भारत जननी ने प्राकृतिक रीति से सर्वथा सुरक्षित अपनी चतु:सीमा में जो सुरक्षा व निश्चिंतता हमें दी उसी का यह फल है। उस अखण्ड मातृभूमि की अनन्य भक्ति हमारी राष्ट्रीयता का मुख्य आधार है।

प्राचीन समय से भूगोल, भाषा, पंथ, रहनसहन, सामाजिक तथा राजनीतिक व्यवस्थाओं की विविधताओं के बावजूद समाज के नाते, संस्कृति के नाते, राष्ट्र के नाते हमारा एक जीवन प्रवाह अक्षुण्ण चलता रहा है। इस में सभी विविधताओं का स्वीकार है, सम्मान है, सुरक्षा है, विकास है। किसी को अपनी संकुचितता, कट्टरता, आक्रामकता व अहंकार के अतिरिक्त कुछ भी छोड़ना नही पड़ता। सत्य, करुणा, अंतर्बाह्य शुचिता व इन तीनों की साधना के अतिरिक्त कुछ भी अनिवार्य नहीं। भारत भक्ति, हमारे समान पूर्वजों के उज्ज्वल आदर्श व भारत की सनातन संस्कृति इन तीन दीपस्तंभों के द्वारा प्रकाशित व प्रशस्त पथ पर मिलजुलकर प्रेम पूर्वक चलना यही अपना स्व, अपना राष्ट्रधर्म है।

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के समाज को आवाहन का प्रारंभ से यही आशय रहा है। आज यह अनुभव आता है कि उस पुकार को सुनने समझने को अब सब लोग तैयार हैं। अज्ञान, असत्य, द्वेष, भय, अथवा स्वार्थ के कारण संघ के विरुद्ध जो अपप्रचार चलता है उसका प्रभाव कम हो रहा है। क्यों कि संघ की व्याप्ति व समाज संपर्क में - यानी संघ की शक्ति में लक्षणीय वृद्धि हुई है। दुनिया में सुना जाने के लिए सत्य को भी शक्तिशाली होना पड़ता है यह जीवन का विचित्र वास्तव है। दुनिया में दुष्ट शक्तियाँ भी हैं, उनसे बचने के लिए व अन्यों को बचाने के लिए भी सज्जनों की संगठित शक्ति चाहिए। संघ उपरोक्त राष्ट्र विचार का प्रचार - प्रसार करते हुए सम्पूर्ण समाज को संगठित शक्ति के रूप में खड़ा करने का काम कर रहा है। यही हिंदू समाज के संगठन का काम है, क्यों कि उपरोक्त राष्ट्र विचार को हिंदुराष्ट्र का विचार कहते हैं और वह है भी। इसलिए संघ उपरोक्त राष्ट्र विचार को मानने वाले सबका यानी हिंदू समाज का संगठन, हिंदू धर्म, संस्कृति व समाज का संरक्षण कर हिंदू राष्ट्र की सर्वांगीण उन्नति के लिए, ' सर्वेषां अविरोधेन ' करता है।

अब जब संघ को समाज मे कुछ स्नेह तथा विश्वास का लाभ हुआ है और उसकी शक्ति भी है तो हिन्दू राष्ट्र की बात को लोग गम्भीरता पूर्वक सुनते हैं। इसी आशय को मन में रखते हुए परन्तु हिन्दू शब्द का विरोध करते हुए अन्य शब्दों का उपयोग करने वाले लोग हैं। हमारा उनसे कोई विरोध नहीं। आशय की स्पष्टता के लिए हम हमारे लिए हिंदू शब्द का आग्रह रखते रहेंगे।

तथाकथित अल्पसंख्यकों में बिनाकारण एक भय का हौवा खड़ा किया जाता है कि हम से अथवा संगठित हिन्दू से खतरा है। ऐसा न कभी हुआ है न होगा। न यह हिंदू का, न ही संघ का स्वभाव या इतिहास रहा। अन्याय, अत्याचार, द्वेष का सहारा लेकर गुंडागर्दी करने वाले समाज की शत्रुता करते हैं तो आत्मरक्षा अथवा आप्तरक्षा तो सभी का कर्तव्य बन जाता है। "ना भय देत काहू को ना भय जानत आप" ऐसा हिन्दू समाज खड़ा हो यह समय की आवश्यकता है। यह किसी के विरुद्ध नहीं है। संघ पूरे दृढ़ता के साथ आपसी भाईचारा, भद्रता व शांति के पक्ष में खडा है।

ऐसी चिन्ताएँ मन में रखकर तथाकथित अल्पसंख्यकों में से कुछ सज्जन गत वर्षों में मिलने के लिए आते रहे हैं। उनसे संघ के कुछ अधिकारियों का संपर्क संवाद हुआ है, होते रहेगा। भारतवर्ष प्राचीन राष्ट्र है, एक राष्ट्र है। उसकी उस पहचान व परंपरा की धारा के साथ तन्मयतापूर्वक अपनी - अपनी विशिष्टता को रखते हुए हम सभी प्रेम सम्मान व शांति के साथ राष्ट्र की नि: स्वार्थ सेवा मिलकर करते चलें। एक दूसरे के सुख - दुःख में परस्पर साथी बनें, भारत को जानें, भारत को मानें, भारत के बने, यही एकात्म, समरस राष्ट्र की कल्पना संघ करता है। संघ का और कोई उद्देश्य या स्वार्थ इस में नहीं है।

अभी पिछले दिनों उदयपुर में एक अत्यंत ही जघन्य एवं दिल दहला देने वाली घटना घटी। सारा समाज स्तब्ध रह गया। अधिकांश समाज दु:खी एवं आक्रोशित था। ऐसी घटनाओं की पुनरावृत्ति न हो यह सुनिश्चित करना होगा। ऐसी घटनाओं के मूल में पूरा समाज नहीं होता। उदयपुर घटना के बाद मुस्लिम समाज में से भी कुछ प्रमुख व्यक्तियों ने अपना निषेध प्रगट किया। यह निषेध अपवाद बन कर ना रह जाए अपितु अधिकांश मुस्लिम समाज का यह स्वभाव बनना चाहिए। हिन्दू समाज का एक बड़ा वर्ग ऐसी घटना घटने पर हिंदू पर आरोप लगे तो भे मुखरता से विरोध और निषेध प्रगट करता है।

उकसाना कोई भी और कैसा भी हो, क़ानून एवं संविधान की मर्यादा में रहकर सदैव सबको अपना विरोध प्रगट करना चाहिए। समाज जुड़े - टूटे नहीं, झगड़े नहीं, बिखरे नहीं। मन-वचन-कर्म से यही प्रतिभाव मन में रखकर समाज के

सभी सज्जनों को मुखर होना चाहिए। हम दिखते भिन्न और विशिष्ट हैं इसलिए हम अलग हैं, हमें अलगाव चाहिए, इस देश के साथ, इस की मूल मुख्य जीवनधारा व पहचान के साथ हम नहीं चल सकते; इस असत्य के कारण " भाई टूटे धरती खोयी मिटे धर्मसंस्थान " यह विभाजन का ज़हरीला अनुभव लेकर कोई भी सुखी तो नहीं हुआ। हम भारत के हैं, भारतीय पूर्वजों के हैं, भारत की सनातन संस्कृति के हैं, समाज व राष्ट्रीयता के नाते एक हैं, यही हमारा तारक मंत्र है।

स्वाधीनता के ७५ वर्ष पूरे हो रहे हैं। हमारे राष्ट्रीय नवोत्थान के प्रारंभ काल में स्वामी विवेकानंद जी ने हमें भारत माता को ही आराध्य मानकर कर्मरत होने का आवाहन किया था। १५ अगस्त १९४७ को पहले स्वतंत्रता दिवस तथा स्वयं के वर्धापन दिवस पर महर्षि अरविन्द ने भारतवासियों को संदेश दिया। उसमें उनके पांच सपनों का उल्लेख है। भारत की स्वतंत्रता व एकात्मता यह पहला था। संवैधानिक रीति से राज्यों का विलय हो कर एकसंध भारत बनने पर वे प्रसन्नता व्यक्त करते हैं। किन्तु विभाजन के कारण हिन्दू व मुसलमानों के बीच एकता के बजाय एक शाश्वत राजनीतिक खाई निर्माण हुई, जो भारत की एकात्मता, उन्नति व शांति के मार्ग में बाधक बन सकती है इसकी उन्हें चिंता थी। जिस किसी प्रकार से जाए, विभाजन निरस्त हो कर भारत अखंड बने यह उत्कट इच्छा वे जताते हैं। क्यों कि उनके अगले सभी स्वप्नों को - एशिया के देशों की मुक्ति, विश्व की एकता, भारत की आध्यात्मिकता का वैश्विक अभिमंत्रण तथा अतिमानस का जगत में अवतरण - साकार करने में भारत की ही प्रधानता होगी यह वे जानते थे। इसलिए कर्तव्य का उनका दिया संदेश बहुत स्पष्ट है -

" राष्ट्र के इतिहास में ऐसा समय आता है जब नियति उसके सामने ऐसा एक ही कार्य, एक ही लक्ष्य रख देती है, जिसपर अन्य सबकुछ, चाहे वह कितना भी उन्नत या उदात्त क्यों न हो, न्यौछावर करना ही पड़ता है। हमारी मातृभूमि के लिए अब ऐसा समय आया है जब उसकी सेवा के अतिरिक्त और कुछ भी प्रिय नहीं, जब अन्य सब उसी के लिए प्रयुक्त करना है। यदि आप पढ़ें तो उसी के लिए पढ़ो, शरीर, मन व आत्मा को उसकी सेवा के लिए ही प्रशिक्षित करो। अपनी जीविका इस लिए प्राप्त करो कि उस के लिए जीना है। सागर पार विदेशों में इसलिए जाओगे कि वहाँ से ज्ञान ले आ कर उससे उसकी सेवा कर सकें। उसके वैभव के लिए काम करो। वह आनंद में रहे इसलिए दुःख झेलो। इस एक परामर्श में सबकुछ आ गया।"

भारत के लोगों के लिए आज भी यही सार्थक संदेश है।

गांव गांव में सज्जन शक्ति। रोम रोम में भारत भक्ति।

यही विजय का महामंत्र है। दसों दिशा से करें प्रयाण॥

जय जय मेरे देश महान॥

|| भारत माता की जय ||